International Journal of Enhanced Research in Educational Development (IJERED)
ISSN: 2320-8708, Vol. 14 Issue 5, September-October, 2026

नव-उदारवादी पूंजीवाद के युग में कल्याणकारी राज्य का पुनर्रचनात्मक ढाँचा

डॉ. चंद्रकला

सहायक आचार्य, राजनीति विज्ञान विभाग, राजकीय कन्या महाविद्यालय कुचामन सिटी (डीडवाना - कुचामन)

सारांश

बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध से विश्व की आर्थिक और राजनीतिक व्यवस्था में व्यापक परिवर्तन देखने को मिला। राज्य के आर्थिक हस्तक्षेप को सीमित करने, निजी क्षेत्र को प्रोत्साहित करने, बाजार-व्यवस्था को व्यापक बनाने तथा वैश्विक पूंजी के मुक्त प्रवाह को बढ़ावा देने वाली नीतियों ने नव-उदारवादी पूंजीवाद को एक प्रभावशाली आर्थिक विचारधारा के रूप में स्थापित किया। इस परिवर्तन का सबसे महत्वपूर्ण प्रभाव कल्याणकारी राज्य की पारंपरिक अवधारणा पर पड़ा। औद्योगिक समाज में विकसित कल्याणकारी राज्य का उद्देश्य नागरिकों को शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार, सामाजिक सुरक्षा तथा आर्थिक संरक्षण उपलब्ध कराना था, जबकि नव-उदारवादी व्यवस्था ने राज्य की भूमिका को प्रत्यक्ष सेवा प्रदाता के स्थान पर नियामक, सुविधा प्रदाता और लक्षित सहायता देने वाली संस्था के रूप में पुनर्परिभाषित किया।

नव-उदारवादी व्यवस्था ने एक ओर आर्थिक दक्षता, प्रतिस्पर्धा, निजी निवेश और उद्यमिता को बढ़ावा दिया, वहीं दूसरी ओर आय और संपत्ति की असमानता, रोजगार की असुरक्षा, सामाजिक सुरक्षा में कमी तथा सार्वजनिक सेवाओं के बाजारीकरण जैसी समस्याएँ भी उत्पन्न हुईं। इस परिस्थिति में कल्याणकारी राज्य की प्रासंगिकता समाप्त नहीं हुई, बल्कि उसके स्वरूप में परिवर्तन आया। आज कल्याणकारी राज्य को सार्वभौमिक सार्वजनिक सेवाओं, सामाजिक सुरक्षा, न्यूनतम आय संरक्षण, रोजगार सृजन, कौशल विकास, स्वास्थ्य, शिक्षा और कमजोर वर्गों के संरक्षण के साथ नए रूप में पुनर्गठित करने की आवश्यकता है।

यह शोध-पत्र नव-उदारवादी पूंजीवाद की प्रमुख विशेषताओं, पारंपरिक कल्याणकारी राज्य के संकट, राज्य की बदलती भूमिका, सामाजिक सुरक्षा की नई संरचना तथा भारत के संदर्भ में कल्याणकारी राज्य के पुनर्रचनात्मक ढाँचे का विश्लेषण प्रस्तुत करता है। अध्ययन का निष्कर्ष है कि बाजार और राज्य को परस्पर विरोधी संस्थाओं के रूप में देखने के बजाय सामाजिक न्याय, आर्थिक विकास और मानवीय गरिमा के बीच संतुलन स्थापित करना आवश्यक है।

संकेताक्षर:- नव-उदारवाद, पूंजीवाद, कल्याणकारी राज्य, सामाजिक सुरक्षा, आर्थिक असमानता, सार्वजनिक सेवाएँ, सामाजिक न्याय, बाजार व्यवस्था, पुनर्रचना।

प्रस्तावना

आधुनिक राज्य की भूमिका को समझने के लिए कल्याणकारी राज्य की अवधारणा अत्यंत महत्वपूर्ण है। औद्योगिक क्रांति के बाद उत्पन्न आर्थिक असमानताओं, श्रमिक शोषण और सामाजिक असुरक्षा ने राज्य को नागरिकों के आर्थिक एवं सामाजिक जीवन में हस्तक्षेप करने के लिए प्रेरित किया। धीरे-धीरे राज्य ने शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार, सामाजिक सुरक्षा, पेंशन, बेरोजगारी सहायता तथा निर्धन वर्गों के संरक्षण की जिम्मेदारी स्वीकार की। इस प्रकार कल्याणकारी राज्य आधुनिक लोकतांत्रिक व्यवस्था का महत्वपूर्ण आधार बना।

द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद अनेक पश्चिमी देशों में कल्याणकारी राज्य का विस्तार हुआ। राज्य ने सार्वजनिक शिक्षा, सार्वजनिक स्वास्थ्य, सामाजिक बीमा और रोजगार सुरक्षा के क्षेत्र में व्यापक भूमिका निभाई। आर्थिक विकास और सामाजिक कल्याण के बीच संतुलन स्थापित करने का प्रयास किया गया। किंतु 1970 के दशक के बाद वैश्विक अर्थव्यवस्था में मंदी, मुद्रास्फीति, बेरोजगारी तथा राजकोषीय दबाव जैसी समस्याओं ने कल्याणकारी राज्य की पारंपरिक व्यवस्था पर प्रश्न उठाए।

इसी पृष्ठभूमि में नव-उदारवादी आर्थिक विचारधारा का प्रभाव बढ़ा। इस विचारधारा ने बाजार को आर्थिक संसाधनों के अधिक प्रभावी वितरण का माध्यम माना तथा राज्य के प्रत्यक्ष आर्थिक हस्तक्षेप को सीमित करने पर बल दिया। निजीकरण, उदारीकरण, विनियमन में कमी और वैश्वीकरण इसके प्रमुख आधार बने।

नव-उदारवादी परिवर्तन ने राज्य और बाजार के संबंधों को पुनर्परिभाषित किया। पहले जहाँ राज्य स्वयं अनेक वस्तुओं और सेवाओं का प्रमुख प्रदाता था, वहीं नई व्यवस्था में निजी क्षेत्र को अधिक जिम्मेदारी दी गई। इसके साथ ही कल्याणकारी नीतियों का सार्वभौमिक स्वरूप कई स्थानों पर कमजोर हुआ और लक्षित सहायता, गरीबी उन्मूलन तथा मानव पूंजी निर्माण पर अधिक जोर दिया गया।

हालाँकि नव-उदारवादी व्यवस्था ने आर्थिक वृद्धि और निवेश के नए अवसर पैदा किए, लेकिन इसके सामाजिक परिणामों को लेकर गंभीर प्रश्न उठे। रोजगार की अस्थिरता, आय की असमानता, सार्वजनिक सेवाओं के निजीकरण और सामाजिक सुरक्षा की सीमित उपलब्धता ने कल्याणकारी राज्य के पुनर्गठन की आवश्यकता को सामने रखा।

आज प्रश्न यह नहीं है कि कल्याणकारी राज्य समाप्त होना चाहिए या नहीं, बल्कि यह है कि बदलती आर्थिक परिस्थितियों में उसका नया स्वरूप कैसा होना चाहिए। इसी प्रश्न के संदर्भ में नव-उदारवादी पूंजीवाद के युग में कल्याणकारी राज्य के पुनर्रचनात्मक ढाँचे को समझना आवश्यक है।

नव-उदारवादी पूंजीवाद की अवधारणा:- नव-उदारवाद आधुनिक आर्थिक विचारधारा की ऐसी प्रवृत्ति है जो बाजार की स्वतंत्रता, निजी संपत्ति, प्रतिस्पर्धा, निजी उद्यम तथा आर्थिक गतिविधियों में राज्य के सीमित हस्तक्षेप पर बल देती है। इसके वैचारिक विकास में फ्रेडरिक हायक और मिल्टन फ्रीडमैन जैसे विचारकों का महत्वपूर्ण योगदान माना जाता है।

नव-उदारवादी दृष्टिकोण के अनुसार बाजार में प्रतिस्पर्धा संसाधनों के अधिक कुशल उपयोग को प्रोत्साहित करती है। राज्य का कार्य प्रत्येक आर्थिक गतिविधि को स्वयं संचालित करना नहीं, बल्कि ऐसा संस्थागत वातावरण तैयार करना है जिसमें निजी उद्यम और बाजार स्वतंत्र रूप से कार्य कर सकें।

इस विचारधारा की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं:-
निजीकरण को बढ़ावा देना।
व्यापार एवं निवेश संबंधी प्रतिबंधों को कम करना।
बाजार प्रतिस्पर्धा को प्रोत्साहित करना।
राज्य के प्रत्यक्ष आर्थिक हस्तक्षेप को सीमित करना।
सार्वजनिक उपक्रमों में निजी भागीदारी बढ़ाना।
वैश्विक पूंजी और व्यापार के लिए अर्थव्यवस्था को खोलना।
सरकारी व्यय को नियंत्रित करना।
लक्षित सामाजिक सहायता पर जोर देना।

नव-उदारवाद को केवल आर्थिक नीति के रूप में नहीं देखा जा सकता। इसका प्रभाव सामाजिक संस्थाओं, श्रम संबंधों, शिक्षा, स्वास्थ्य और नागरिक-राज्य संबंधों पर भी पड़ा है। बाजार आधारित तर्क धीरे-धीरे उन क्षेत्रों में भी प्रवेश करने लगा जिन्हें परंपरागत रूप से सामाजिक अधिकार माना जाता था।

पारंपरिक कल्याणकारी राज्य की अवधारणा:- कल्याणकारी राज्य का मूल उद्देश्य नागरिकों के जीवन में न्यूनतम सामाजिक एवं आर्थिक सुरक्षा सुनिश्चित करना है। इसका आधार यह विचार है कि केवल राजनीतिक समानता पर्याप्त नहीं है। यदि नागरिकों के पास शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार और सामाजिक सुरक्षा की समान पहुँच नहीं है तो लोकतांत्रिक अधिकार भी सीमित प्रभावशीलता रखते हैं।

कल्याणकारी राज्य के प्रमुख कार्यों में सामाजिक बीमा, सार्वजनिक शिक्षा, स्वास्थ्य सेवाएँ, बेरोजगारी सहायता, वृद्धावस्था पेंशन, मातृत्व सहायता, बाल संरक्षण तथा निर्धन वर्गों के लिए आर्थिक सहायता शामिल रहे हैं।

टी. एच. मार्शल ने नागरिकता को नागरिक, राजनीतिक और सामाजिक अधिकारों के व्यापक रूप में समझाया। सामाजिक अधिकारों का विस्तार आधुनिक कल्याणकारी राज्य की महत्वपूर्ण विशेषता रहा है। इसी प्रकार रिचर्ड टिटमस और अन्य विद्वानों ने सामाजिक नीति को केवल दान या सहायता नहीं बल्कि सामाजिक एकीकरण और नागरिक अधिकारों से जोड़कर देखा।

कल्याणकारी राज्य का उद्देश्य बाजार से उत्पन्न असमानताओं को पूरी तरह समाप्त करना नहीं था, बल्कि उनके दुष्प्रभावों को कम करना था। कर व्यवस्था और सार्वजनिक व्यय के माध्यम से संसाधनों का पुनर्वितरण किया गया। इसके कारण शिक्षा और स्वास्थ्य जैसी सुविधाएँ व्यापक जनसंख्या तक पहुँच सकीं।

इस व्यवस्था में राज्य को सामाजिक न्याय का प्रमुख संरक्षक माना गया। लेकिन समय के साथ बदलती अर्थव्यवस्था, वैश्वीकरण, तकनीकी परिवर्तन और राजकोषीय दबावों ने इस मॉडल की सीमाओं को उजागर किया।

कल्याणकारी राज्य के संकट के कारण:- नव-उदारवादी पूंजीवाद के उदय के साथ कल्याणकारी राज्य के सामने कई चुनौतियाँ उत्पन्न हुईं। इनमें सबसे महत्वपूर्ण चुनौती राजकोषीय दबाव थी। व्यापक सामाजिक योजनाओं के लिए सरकार को बड़े पैमाने पर सार्वजनिक व्यय करना पड़ता है। जब आर्थिक वृद्धि धीमी होती है और बेरोजगारी बढ़ती है, तब कर राजस्व पर दबाव पड़ता है।

दूसरी चुनौती वैश्वीकरण से उत्पन्न हुई। पूंजी के अंतरराष्ट्रीय प्रवाह ने सरकारों की आर्थिक नीतियों को वैश्विक बाजार की अपेक्षाओं से जोड़ दिया। अधिक कर लगाने या कठोर श्रम कानून लागू करने की स्थिति में निवेश के दूसरे देशों में जाने की संभावना बढ़ी।

तीसरी चुनौती तकनीकी परिवर्तन से संबंधित है। स्वचालन और नई उत्पादन तकनीकों ने पारंपरिक रोजगार के स्वरूप को बदल दिया है। स्थायी रोजगार के स्थान पर अस्थायी, संविदात्मक और मंच-आधारित रोजगार का विस्तार हुआ है। इससे पारंपरिक सामाजिक सुरक्षा प्रणालियों के लिए नई चुनौतियाँ उत्पन्न हुई हैं।

चैथी चुनौती जनसांख्यिकीय परिवर्तन है। वृद्ध जनसंख्या की बढ़ती संख्या ने पेंशन और स्वास्थ्य सेवाओं पर सार्वजनिक व्यय बढ़ाया है।

पाँचवीं चुनौती सामाजिक असमानता की है। नव-उदारवादी व्यवस्था में आर्थिक वृद्धि होने के बावजूद आय और संपत्ति का वितरण असमान रह सकता है। विश्व असमानता प्रतिवेदन ने वैश्विक स्तर पर आय और संपत्ति के अत्यधिक असमान वितरण को रेखांकित किया है। इससे स्पष्ट होता है कि आर्थिक वृद्धि अपने आप सामाजिक न्याय सुनिश्चित नहीं करती।

नव-उदारवादी पूंजीवाद और राज्य की बदलती भूमिका:- नव-उदारवादी व्यवस्था ने राज्य को समाप्त नहीं किया बल्कि उसकी भूमिका को पुनर्परिभाषित किया। राज्य अब प्रत्यक्ष उत्पादक या सेवा प्रदाता के स्थान पर नियामक, सुविधा प्रदाता और सामाजिक सुरक्षा के लक्षित संरक्षक के रूप में कार्य करने लगा।

यह परिवर्तन तीन स्तरों पर दिखाई देता है।

1 आर्थिक भूमिका में परिवर्तन:- राज्य ने अनेक आर्थिक गतिविधियों में प्रत्यक्ष भागीदारी कम की और निजी क्षेत्र के लिए अधिक अवसर खोले। सार्वजनिक उपक्रमों के निजीकरण तथा बाजार प्रतिस्पर्धा को प्रोत्साहन दिया गया।

2 सामाजिक नीति में परिवर्तन:- सार्वभौमिक कल्याणकारी योजनाओं के स्थान पर कई देशों में लक्षित सहायता को प्राथमिकता दी गई। इसका उद्देश्य सीमित सार्वजनिक संसाधनों को सबसे जरूरतमंद समूहों तक पहुँचाना था।

3 नियामक भूमिका का विस्तार:- राज्य की प्रत्यक्ष भूमिका घटने के साथ उसकी नियामक भूमिका अधिक महत्वपूर्ण हो गई। बाजार में निष्पक्ष प्रतिस्पर्धा, उपभोक्ता संरक्षण, श्रमिक अधिकार, पर्यावरण सुरक्षा तथा वित्तीय स्थिरता के लिए प्रभावी नियमन आवश्यक हो गया।

इस प्रकार नव-उदारवादी राज्य को 'कम राज्य' के रूप में देखना उचित नहीं है। वास्तव में राज्य की भूमिका का स्वरूप बदला है। चुनौती यह है कि नियामक राज्य सामाजिक न्याय के उद्देश्य से कितना प्रभावी ढंग से कार्य कर सकता है।

कल्याणकारी राज्य का पुनर्रचनात्मक ढाँचा:- नव-उदारवादी पूंजीवाद की परिस्थितियों में कल्याणकारी राज्य की पुनर्रचना आवश्यक है। पुनर्रचना का अर्थ पुराने कल्याणकारी मॉडल को पूरी तरह समाप्त करना नहीं बल्कि उसे वर्तमान सामाजिक, आर्थिक और तकनीकी परिस्थितियों के अनुरूप विकसित करना है।

सार्वभौमिक आधारभूत सेवाएँ:- शिक्षा, स्वास्थ्य, पोषण, स्वच्छ जल और आवास जैसी मूलभूत सेवाओं को बाजार की क्षमता पर पूरी तरह निर्भर नहीं किया जा सकता। इन सेवाओं में राज्य की मजबूत भूमिका आवश्यक है।

विशेष रूप से प्राथमिक स्वास्थ्य और सार्वजनिक शिक्षा को सामाजिक अधिकार के रूप में विकसित करना चाहिए। निजी संस्थाओं की भागीदारी हो सकती है, लेकिन राज्य को गुणवत्ता, पहुँच और समानता की जिम्मेदारी से पीछे नहीं हटना चाहिए।

सामाजिक सुरक्षा का विस्तार:- नई अर्थव्यवस्था में रोजगार के बदलते स्वरूप को देखते हुए सामाजिक सुरक्षा को स्थायी नौकरी से जोड़ना उचित नहीं होगा। असंगठित श्रमिक, घरेलू कामगार, छोटे किसान, संविदा श्रमिक और मंच-आधारित श्रमिक भी सामाजिक सुरक्षा के दायरे में आने चाहिए।

पेंशन, दुर्घटना बीमा, मातृत्व सहायता, स्वास्थ्य सुरक्षा और बेरोजगारी सहायता जैसी योजनाओं को व्यापक बनाना आवश्यक है।

रोजगार-केंद्रित कल्याण:- कल्याणकारी राज्य को केवल आय हस्तांतरण पर निर्भर नहीं रहना चाहिए। रोजगार सृजन को सामाजिक नीति का केंद्रीय उद्देश्य बनाना आवश्यक है।

राज्य को श्रम-प्रधान उद्योगों, लघु एवं मध्यम उद्यमों, ग्रामीण उद्योगों तथा हरित अर्थव्यवस्था को प्रोत्साहन देना चाहिए। इससे आर्थिक वृद्धि और सामाजिक सुरक्षा के बीच संबंध मजबूत होगा।

कौशल विकास:- तकनीकी परिवर्तन के कारण श्रमिकों को नए कौशल की आवश्यकता होती है। इसलिए शिक्षा प्रणाली को रोजगार की बदलती आवश्यकताओं के अनुरूप बनाया जाना चाहिए।

कौशल विकास को केवल युवाओं तक सीमित न रखकर कामकाजी वयस्कों के पुनःप्रशिक्षण से भी जोड़ा जाना चाहिए। इससे तकनीकी परिवर्तन के कारण रोजगार से बाहर होने वाले श्रमिकों को नई आर्थिक गतिविधियों में शामिल किया जा सकता है।

नव-उदारवादी व्यवस्था में सामाजिक न्याय:- कल्याणकारी राज्य की पुनर्रचना का सबसे महत्वपूर्ण उद्देश्य सामाजिक न्याय होना चाहिए। बाजार आर्थिक दक्षता को बढ़ावा दे सकता है, लेकिन वह अपने आप सामाजिक न्याय सुनिश्चित नहीं करता।

सामाजिक न्याय के लिए कर व्यवस्था को अधिक प्रगतिशील बनाना आवश्यक है। उच्च आय वाले वर्गों से उचित कर संग्रह करके शिक्षा, स्वास्थ्य और सामाजिक सुरक्षा में निवेश किया जा सकता है।

इसके साथ ही संपत्ति और अवसर की असमानता को कम करना आवश्यक है। सामाजिक न्याय केवल गरीबों को आर्थिक सहायता देने से पूरा नहीं होता। गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार और सामाजिक सम्मान की समान उपलब्धता भी आवश्यक है।

अमर्त्य सेन ने विकास को केवल आय की वृद्धि के रूप में नहीं बल्कि मनुष्यों की क्षमताओं के विस्तार के रूप में समझाया है। इस दृष्टिकोण से कल्याणकारी राज्य का उद्देश्य नागरिकों को ऐसी परिस्थितियाँ उपलब्ध कराना होना चाहिए जिनमें वे अपनी क्षमताओं का विकास कर सकें।

भारत के संदर्भ में कल्याणकारी राज्य की पुनर्रचना:-

भारत में कल्याणकारी राज्य की अवधारणा संविधान में निहित सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय के लक्ष्यों से जुड़ी हुई है। भारतीय संविधान के नीति-निर्देशक तत्व राज्य को सामाजिक व्यवस्था स्थापित करने, आर्थिक असमानता कम करने तथा नागरिकों के कल्याण को बढ़ावा देने का निर्देश देते हैं।

भारत ने आर्थिक उदारीकरण के बाद बाजार आधारित आर्थिक नीतियों को व्यापक रूप से अपनाया। इससे आर्थिक वृद्धि, विदेशी निवेश, निजी क्षेत्र और सेवा क्षेत्र के विस्तार को गति मिली। किंतु इसके साथ ही रोजगार की गुणवत्ता, ग्रामीण असमानता, सामाजिक सुरक्षा और सार्वजनिक सेवाओं की उपलब्धता जैसी चुनौतियाँ भी बनी रहीं।

भारत जैसे विशाल और विविधतापूर्ण देश में कल्याणकारी राज्य का मॉडल केवल यूरोपीय अनुभव पर आधारित नहीं हो सकता। यहाँ बड़ी संख्या में लोग असंगठित क्षेत्र में कार्य करते हैं। इसलिए सामाजिक सुरक्षा का सार्वभौमिक और पोर्टेबल स्वरूप आवश्यक है।

भारत में सार्वजनिक वितरण प्रणाली, रोजगार गारंटी, मध्यान्ह भोजन, स्वास्थ्य सुरक्षा, ग्रामीण आवास, सामाजिक पेंशन और प्रत्यक्ष आर्थिक सहायता जैसी योजनाओं ने कल्याणकारी राज्य की भूमिका को नया रूप दिया है।

महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम ने ग्रामीण परिवारों को रोजगार की कानूनी गारंटी देकर कल्याणकारी नीति को अधिकार-आधारित दृष्टिकोण प्रदान किया। राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम ने खाद्य सुरक्षा को व्यापक सामाजिक अधिकार से जोड़ा।

इन योजनाओं से यह स्पष्ट होता है कि बाजार आधारित अर्थव्यवस्था के साथ भी राज्य की सामाजिक जिम्मेदारी समाप्त नहीं होती। डिजिटल तकनीक और कल्याणकारी राज्य:- डिजिटल तकनीक ने कल्याणकारी राज्य के संचालन में नई संभावनाएँ उत्पन्न की हैं। लाभार्थियों की पहचान, धन का हस्तांतरण, योजनाओं की निगरानी और प्रशासनिक पारदर्शिता को तकनीक के माध्यम से अधिक प्रभावी बनाया जा सकता है।

भारत में डिजिटल माध्यमों के विस्तार से सरकारी सहायता को सीधे लाभार्थियों तक पहुँचाने की क्षमता बढ़ी है। इससे बिचैलियों की भूमिका कम करने और भ्रष्टाचार को नियंत्रित करने में सहायता मिल सकती है।

लेकिन डिजिटल कल्याण व्यवस्था के साथ नई चुनौतियाँ भी जुड़ी हैं। डिजिटल पहचान, निजी आँकड़ों की सुरक्षा, तकनीकी बहिष्करण और इंटरनेट तक असमान पहुँच गंभीर प्रश्न हैं।

यदि किसी नागरिक के पास आवश्यक डिजिटल साधन नहीं हैं, तो वह कल्याणकारी योजना से वंचित हो सकता है। इसलिए डिजिटल कल्याण व्यवस्था को मानवीय सहायता और वैकल्पिक व्यवस्था के साथ जोड़ना आवश्यक है।

तकनीक को कल्याणकारी राज्य का साधन बनाया जाना चाहिए, उसका विकल्प नहीं।

स्वास्थ्य और शिक्षा की पुनर्रचना:- नव-उदारवादी व्यवस्था में स्वास्थ्य और शिक्षा के निजीकरण की प्रवृत्ति बढ़ी है। निजी क्षेत्र ने इन दोनों क्षेत्रों में महत्वपूर्ण योगदान दिया है, लेकिन केवल बाजार आधारित व्यवस्था से समान पहुँच सुनिश्चित नहीं की जा सकती।

स्वास्थ्य के क्षेत्र में गरीब परिवारों के लिए बीमारी आर्थिक संकट का कारण बन सकती है। इसलिए सार्वभौमिक स्वास्थ्य सुरक्षा की आवश्यकता है। प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों को मजबूत करना, ग्रामीण स्वास्थ्य व्यवस्था का विस्तार करना तथा आवश्यक दवाओं की उपलब्धता सुनिश्चित करना आवश्यक है।

शिक्षा के क्षेत्र में भी गुणवत्ता और समानता दोनों महत्वपूर्ण हैं। उच्च शिक्षा के निजीकरण के साथ-साथ सार्वजनिक शिक्षा व्यवस्था को मजबूत करना आवश्यक है। डिजिटल शिक्षा के विस्तार के साथ डिजिटल असमानता को कम करना भी जरूरी है।

कल्याणकारी राज्य की पुनर्रचना में स्वास्थ्य और शिक्षा को व्यय के बजाय दीर्घकालिक सामाजिक निवेश के रूप में देखा जाना चाहिए।

श्रम बाजार और सामाजिक सुरक्षा:- नव-उदारवादी अर्थव्यवस्था में श्रम बाजार अधिक लचीला हुआ है। कंपनियों को श्रमिकों की संख्या और कार्य-समय में परिवर्तन करने की सुविधा मिली है। इससे कुछ क्षेत्रों में रोजगार के अवसर बढ़े, लेकिन श्रमिकों की रोजगार सुरक्षा कमजोर भी हुई।

अस्थायी रोजगार, संविदा रोजगार और मंच-आधारित रोजगार के विस्तार ने सामाजिक सुरक्षा की पारंपरिक संरचना को चुनौती दी है।

पुनर्रचित कल्याणकारी राज्य को श्रमिकों की सुरक्षा के लिए निम्नलिखित उपाय अपनाने चाहिए:-

1) सभी श्रमिकों के लिए न्यूनतम सामाजिक सुरक्षा।
2) दुर्घटना और स्वास्थ्य बीमा की सार्वभौमिक व्यवस्था।
3) वृद्धावस्था पेंशन का विस्तार।
4) बेरोजगारी के समय सहायता।
5) मातृत्व और पारिवारिक सहायता।
6) न्यूनतम मजदूरी का प्रभावी क्रियान्वयन।
7) श्रमिकों के कौशल विकास की व्यवस्था।
8) मंच-आधारित श्रमिकों के अधिकारों की सुरक्षा।

इस प्रकार श्रम बाजार को लचीला बनाने के साथ श्रमिकों को असुरक्षित छोड़ना उचित नहीं होगा।
पर्यावरणीय संकट और कल्याणकारी राज्य:- वर्तमान समय में कल्याणकारी राज्य की अवधारणा को पर्यावरणीय प्रश्नों से अलग नहीं किया जा सकता। जलवायु परिवर्तन, प्रदूषण, जल संकट और प्राकृतिक आपदाएँ गरीब एवं कमजोर वर्गों को सबसे अधिक प्रभावित करती हैं।

इसलिए भविष्य का कल्याणकारी राज्य केवल सामाजिक सुरक्षा देने वाला राज्य नहीं बल्कि पर्यावरणीय सुरक्षा सुनिश्चित करने वाला राज्य भी होना चाहिए।

हरित रोजगार, नवीकरणीय ऊर्जा, सार्वजनिक परिवहन, जल संरक्षण तथा पर्यावरण-अनुकूल उद्योगों को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए। ऊर्जा परिवर्तन के दौरान प्रभावित श्रमिकों के पुनःप्रशिक्षण और पुनर्वास की व्यवस्था भी आवश्यक है।

इस प्रकार सामाजिक कल्याण और पर्यावरणीय स्थिरता को एक-दूसरे से जोड़ना आवश्यक है।
बाजार और राज्य के बीच संतुलन:- नव-उदारवादी पूंजीवाद की सबसे बड़ी बहस राज्य और बाजार के संबंध को लेकर है। एक दृष्टिकोण बाजार को अधिक स्वतंत्रता देने की वकालत करता है, जबकि दूसरा दृष्टिकोण राज्य के व्यापक हस्तक्षेप को आवश्यक मानता है।

व्यवहार में दोनों में से किसी एक को पूर्णतः स्वीकार करना उचित नहीं है। बाजार उत्पादन, नवाचार और निवेश के लिए महत्वपूर्ण है, जबकि राज्य सामाजिक न्याय, सार्वजनिक वस्तुओं और कमजोर वर्गों की सुरक्षा के लिए आवश्यक है।

इसलिए पुनर्रचित कल्याणकारी राज्य को 'बाजार विरोधी' नहीं बल्कि 'बाजार को सामाजिक उद्देश्य से नियंत्रित करने वाला' राज्य होना चाहिए।

राज्य को उन क्षेत्रों में सक्रिय रहना चाहिए जहाँ बाजार समान अवसर सुनिश्चित करने में असफल रहता है। दूसरी ओर जहाँ निजी क्षेत्र अधिक दक्षता से उत्पादन कर सकता है, वहाँ उचित नियमन के साथ निजी भागीदारी को स्वीकार किया जा सकता है।

कल्याणकारी राज्य की पुनर्रचना के प्रमुख आधार:- नव-उदारवादी पूंजीवाद के वर्तमान दौर में कल्याणकारी राज्य के पुनर्रचनात्मक ढाँचे को निम्नलिखित आधारों पर विकसित किया जा सकता है:-

1 सार्वभौमिकता:- मूलभूत सामाजिक सेवाएँ सभी नागरिकों के लिए उपलब्ध होनी चाहिए।
2 लक्षित सहायता:- विशेष रूप से कमजोर वर्गों के लिए अतिरिक्त सहायता की व्यवस्था होनी चाहिए।
3 सामाजिक निवेश:- शिक्षा, स्वास्थ्य और कौशल को खर्च नहीं बल्कि सामाजिक निवेश माना जाना चाहिए।
4 रोजगार सुरक्षा:- आर्थिक विकास का उद्देश्य केवल उत्पादन बढ़ाना नहीं बल्कि सम्मानजनक रोजगार पैदा करना भी होना चाहिए।
5 सामाजिक भागीदारी:- कल्याणकारी योजनाओं के निर्माण और संचालन में नागरिक समाज, स्थानीय संस्थाओं और समुदायों की भागीदारी बढ़ाई जानी चाहिए।
6 पारदर्शिता:- सार्वजनिक योजनाओं में पारदर्शिता और उत्तरदायित्व सुनिश्चित किया जाना चाहिए।
7 तकनीकी समावेशन:- तकनीक का उपयोग कल्याणकारी सेवाओं को सरल बनाने के लिए किया जाए, लेकिन तकनीकी साधनों से वंचित नागरिकों के लिए वैकल्पिक व्यवस्था भी बनी रहे।

निष्कर्ष

नव-उदारवादी पूंजीवाद के युग में कल्याणकारी राज्य की प्रासंगिकता समाप्त नहीं हुई है। इसके विपरीत आर्थिक असमानता, रोजगार की असुरक्षा, तकनीकी परिवर्तन, पर्यावरणीय संकट और सामाजिक विभाजन ने कल्याणकारी राज्य की आवश्यकता को और अधिक महत्वपूर्ण बना दिया है।

नव-उदारवादी व्यवस्था ने राज्य की पारंपरिक भूमिका में परिवर्तन अवश्य किया है, लेकिन राज्य को सामाजिक जीवन से पूरी तरह बाहर नहीं किया जा सकता। बाजार आर्थिक उत्पादन और नवाचार का महत्वपूर्ण माध्यम है, परंतु वह अपने आप सामाजिक न्याय, समान अवसर और मानवीय सुरक्षा सुनिश्चित नहीं करता।

इसलिए आज आवश्यकता ऐसे पुनर्रचित कल्याणकारी राज्य की है जो बाजार की उत्पादक शक्तियों का उपयोग करे, लेकिन सामाजिक न्याय को सर्वोच्च प्राथमिकता दे। शिक्षा, स्वास्थ्य, सामाजिक सुरक्षा, रोजगार, कौशल विकास और पर्यावरणीय संरक्षण इस नई व्यवस्था के प्रमुख आधार होने चाहिए।

भारत के संदर्भ में यह पुनर्रचना और भी महत्वपूर्ण है क्योंकि यहाँ बड़ी संख्या में नागरिक असंगठित क्षेत्र में कार्य करते हैं और सामाजिक-आर्थिक असमानताएँ व्यापक हैं। भारतीय कल्याणकारी राज्य को आर्थिक वृद्धि और सामाजिक न्याय के बीच संतुलन स्थापित करना होगा।

संदर्भ सूची

1. हायक, फ्रेडरिक ए.-''दासता की ओर मार्ग'', शिकागो विश्वविद्यालय प्रकाशन।
2. फ्रीडमैन, मिल्टन-''पूंजीवाद और स्वतंत्रता'', शिकागो विश्वविद्यालय प्रकाशन।
3. सेन, अमर्त्य-''विकास की स्वतंत्रता'', ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय प्रेस।
4. मार्शल, टी. एच.-''नागरिकता और सामाजिक वर्ग'', कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय प्रेस।
5. टिटमस, रिचर्ड-''कल्याणकारी राज्य की सामाजिक नीति'', ऐलन एंड अनविन।
6. एस्पिंग-एंडरसन, गोस्ता-''कल्याणकारी पूंजीवाद की तीन दुनियाएँ'', प्रिंसटन विश्वविद्यालय प्रेस।
7. पिकेटी, थॉमस-''इक्कीसवीं सदी में पूंजी'', हार्वर्ड विश्वविद्यालय प्रेस।
8. स्टिग्लिट्ज, जोसेफ ई.-''असमानता की कीमत'', डब्ल्यू. डब्ल्यू. नॉर्टन एंड कंपनी।
9. हार्वे, डेविड-''नव-उदारवाद का संक्षिप्त इतिहास'', ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय प्रेस।
10. विश्व असमानता प्रयोगशाला-''विश्व असमानता प्रतिवेदन'', विश्व असमानता प्रयोगशाला।
11. सेन, अमर्त्य-''विकास के रूप में स्वतंत्रता'', ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय प्रेस।
12. भारत सरकार-''भारत का संविधान'', विधि और न्याय मंत्रालय।
13. भारत सरकार-''आर्थिक सर्वेक्षण'', वित्त मंत्रालय।
14. भारत सरकार-''भारत में सामाजिक सुरक्षा और कल्याणकारी योजनाओं से संबंधित प्रतिवेदन'', नीति आयोग।

15. अंतरराष्ट्रीय श्रम संगठ -''विश्व सामाजिक सुरक्षा प्रतिवेदन'', अंतरराष्ट्रीय श्रम संगठन।
16. संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम-''मानव विकास प्रतिवेदन'', संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम।
17. गिडेन्स, एंथनी-''तीसरा मार्ग सामाजिक लोकतंत्र का पुनरुत्थान'', पोलिटी प्रेस।
18. पोलान्यी, कार्ल-''महान परिवर्तन'', बीकन प्रेस।
19. मार्शल, टी. एच.- ''सामाजिक वर्ग और नागरिकता'', सामाजिक नीति संबंधी अध्ययन।